The Infinite
An International Peer Reviewed / Refereed Journal of Multidisciplinary Research

An Online Peer Reviewed / Refereed Journal
Volume 3 | Issue 4 | April 2026
ISSN: 3048-9539 (Online)
Website: www.theinfinite.co.in

# यूथेनेशिया की विधिमान्यता का विश्लेषणात्मक अध्ययन: संवेदना से संविधान तक

**प्रो०अशोक कुमार राय[1]**

**डॉ०सन्तोष कुमार[2]**

**ARTICLE DETAILS**

**Research Paper**

***मुख्य बिंदुः***

***करुणा मृत्यु, यूथेनेशिया, गरिमामय मृत्यु, अनुच्छेद 21, भारतीय न्याय संहिता 2023***

**सारांश**

*प्रस्तुत शोध पत्र "यूथेनेशिया की विधिमान्यता का विश्लेषणात्मक अध्ययन: संवेदना से संविधान तक" करुणा मृत्यु की अवधारणा का विधिक, नैतिक एवं सांविधानिक परिप्रेक्ष्य में सम्यक् विश्लेषण करता है। यूथेनेशिया, जिसे इस अध्ययन में "करुणा मृत्यु" के रूप में अभिहित किया गया है, उस स्थिति का द्योतक है जहाँ असाध्य रोग अथवा असहनीय पीड़ा से ग्रस्त व्यक्ति को मानवीय संवेदना के आधार पर जीवन-समापन का विकल्प प्रदान किया जाता है। यह अध्ययन इस मूल प्रश्न का परीक्षण करता है कि क्या भारतीय संविधान के अनुच्छेद 21 के अंतर्गत निहित जीवन के अधिकार में गरिमामय मृत्यु का अधिकार भी अंतर्भूत है। शोध में भारतीय न्यायपालिका के प्रमुख निर्णयों, विशेषतः अरुणा शानबाग एवं कॉमन कॉज़ प्रकरणों, का विश्लेषण करते हुए यह प्रतिपादित किया गया है कि निष्क्रिय यूथेनेशिया को सीमित परिस्थितियों में विधिमान्यता प्रदान की गई है। साथ ही, भारतीय न्याय संहिता, 2023 के आलोक में करुणा मृत्यु के विधिक आयामों का परीक्षण किया गया है। अंतरराष्ट्रीय दृष्टिकोण एवं नैतिक विमर्श के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला गया है कि करुणा मृत्यु के संबंध में एक संतुलित, नियंत्रित एवं मानवीय विधिक ढाँचे की आवश्यकता है, जिससे व्यक्ति की गरिमा, स्वायत्तता एवं संवेदना का संरक्षण सुनिश्चित किया जा सके।*

[1] संकायाध्यक्ष, विधि-संकाय,डॉ०राममनोहर लोहिया अवध विश्वविद्यालय,अयोध्या

[2] विधि-संकाय,डॉ०राममनोहर लोहिया अवध विश्वविद्यालय,अयोध्या

**प्रस्तावना**

मानव जीवन को सृष्टि का परमोत्कृष्ट एवं परमपावन उपहार माना गया है। भारतीय दार्शनिक परंपरा में जीवन को केवल जैविक अस्तित्व न मानकर एक आध्यात्मिक यात्रा के रूप में देखा गया है, जिसमें प्रत्येक प्राणी का जीवन स्वयं में एक मूल्यवान सत्ता का प्रतिनिधित्व करता है। तथापि यह भी उतना ही सत्य है कि जीवन की कुछ अवस्थाएँ ऐसी होती हैं, जिनमें अस्तित्व स्वयं व्यक्ति के लिए असहनीय वेदना, निरंतर कष्ट एवं गहन यातना का पर्याय बन जाता है। ऐसी दशा में जीवन का संरक्षण और व्यक्ति की गरिमा का संरक्षण—दोनों के मध्य एक गहन एवं जटिल द्वंद्व उत्पन्न होता है। इसी द्वंद्व के केंद्र में "यूथेनेशिया" अथवा "करुणा मृत्यु" की अवधारणा निहित है।

"यूथेनेशिया" शब्द यूनानी मूल से व्युत्पन्न है, जिसमें "Eu" का अर्थ शुभ तथा "Thanatos" का अर्थ मृत्यु है। तथापि इसका शाब्दिक अनुवाद "शुभ मृत्यु" भारतीय संदर्भ में पूर्णतः उपयुक्त नहीं है, क्योंकि यहाँ इसका आशय किसी प्रकार की सुखानुभूति से नहीं, अपितु पीड़ा से मुक्ति एवं करुणा के आधार पर जीवन-समापन से है। इस कारण "करुणा मृत्यु" शब्द अधिक यथार्थपरक एवं दार्शनिक रूप से उपयुक्त प्रतीत होता है। यह शब्द उस मानवीय संवेदना को अभिव्यक्त करता है, जिसके अंतर्गत किसी असाध्य रोग से पीड़ित व्यक्ति को उसकी असहनीय वेदना से मुक्ति दिलाने का प्रयास किया जाता है।

प्रस्तुत अध्ययन में करुणा मृत्यु की अवधारणा का विश्लेषण केवल विधिक दृष्टिकोण से नहीं, अपितु दार्शनिक, नैतिक एवं सांविधानिक परिप्रेक्ष्य में भी किया गया है। यह शोध इस प्रश्न का उत्तर खोजने का प्रयास करता है कि क्या जीवन के अधिकार के अंतर्गत मृत्यु का अधिकार भी निहित है, तथा क्या करुणा मृत्यु इस अधिकार का वैध विस्तार है।

**करुणा मृत्यु की अवधारणा एवं तात्त्विक स्वरूप**

करुणा मृत्यु उस प्रक्रिया को निरूपित करती है, जिसके अंतर्गत असाध्य रोग से ग्रस्त अथवा असहनीय पीड़ा से पीड़ित व्यक्ति को उसकी स्थिति के अनुरूप जीवन-समापन का विकल्प प्रदान किया जाता है। यह विकल्प या तो स्वयं व्यक्ति की स्पष्ट एवं स्वैच्छिक इच्छा पर आधारित होता है अथवा कुछ विशेष परिस्थितियों में उसके हित में अन्य व्यक्तियों द्वारा लिया जाता है। इस अवधारणा का मूलाधार करुणा, संवेदना एवं दुःख-निवारण है।

प्रस्तुत स्रोत सामग्री में यह प्रतिपादित किया गया है कि करुणा मृत्यु को सामान्य हत्या के समकक्ष नहीं रखा जा सकता, क्योंकि हत्या का प्रेरक तत्व दुर्भावना अथवा स्वार्थ होता है, जबकि करुणा मृत्यु का उद्देश्य पीड़ा से मुक्ति प्रदान करना है ◆। इस प्रकार, यद्यपि दोनों में जीवन-समापन का तत्व समान प्रतीत होता है, तथापि उनके उद्देश्य एवं नैतिक आधार में मूलभूत अंतर विद्यमान है।

दार्शनिक दृष्टि से करुणा मृत्यु का संबंध मुख्यतः उपकारवाद एवं स्वायत्तता के सिद्धांत से है। उपकारवाद के अनुसार वह कृत्य नैतिक रूप से उचित है, जो अधिकतम सुख अथवा न्यूनतम दुःख का कारण बने। यदि किसी व्यक्ति का जीवन केवल पीड़ा का पर्याय बन गया है, तो उस पीड़ा का अंत करना नैतिक दृष्टि से उचित ठहराया जा सकता है। इसी प्रकार, स्वायत्तता

का सिद्धांत यह प्रतिपादित करता है कि प्रत्येक व्यक्ति को अपने जीवन से संबंधित महत्वपूर्ण निर्णय लेने का अधिकार होना चाहिए, जिसमें जीवन-समापन का निर्णय भी सम्मिलित हो सकता है।

**करुणा मृत्यु का वर्गीकरण**

करुणा मृत्यु को विभिन्न आधारों पर वर्गीकृत किया जा सकता है, जिनमें प्रमुख रूप से स्वैच्छिक, अनैच्छिक एवं चिकित्सकीय करुणा मृत्यु सम्मिलित हैं। स्वैच्छिक करुणा मृत्यु वह है, जिसमें रोगी स्वयं अपनी स्वतंत्र एवं स्पष्ट इच्छा से जीवन-समापन का निर्णय लेता है। यह स्वरूप सर्वाधिक विवादरहित माना जाता है, क्योंकि इसमें व्यक्ति की स्वायत्तता का सम्मान किया जाता है।

अनैच्छिक करुणा मृत्यु वह है, जिसमें रोगी अपनी इच्छा व्यक्त करने में असमर्थ होता है, जैसे कि कोमा अथवा अचेत अवस्था में, और ऐसी स्थिति में परिजन अथवा चिकित्सक उसके हित में निर्णय लेते हैं। यह स्वरूप अत्यंत विवादास्पद है, क्योंकि इसमें दुरुपयोग की संभावना विद्यमान रहती है। प्रस्तुत दस्तावेज़ में भी इस बात पर बल दिया गया है कि ऐसे मामलों में निर्णय अत्यंत सावधानीपूर्वक लिया जाना चाहिए, जिससे किसी प्रकार की त्रुटि अथवा दुरुपयोग की संभावना को रोका जा सके ।

चिकित्सकीय करुणा मृत्यु में चिकित्सक की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण होती है, क्योंकि वही रोगी की स्थिति का वैज्ञानिक मूल्यांकन कर यह निर्णय लेता है कि क्या रोग असाध्य है तथा क्या रोगी की पीड़ा वास्तव में असहनीय है। कुछ विचारकों के अनुसार चिकित्सकों को विधिक संरक्षण प्रदान किया जाना चाहिए, जिससे वे मानवीय आधार पर निर्णय लेने में सक्षम हो सकें।

**नैतिक एवं सामाजिक परिप्रेक्ष्य**

करुणा मृत्यु का प्रश्न केवल विधिक विमर्श तक सीमित नहीं है, अपितु यह गहन नैतिक एवं सामाजिक विचार-विमर्श का विषय भी है। एक ओर यह तर्क प्रस्तुत किया जाता है कि जीवन ईश्वर प्रदत्त है और इसका संरक्षण करना प्रत्येक व्यक्ति का नैतिक कर्तव्य है। अतः किसी भी प्रकार से जीवन-समापन को उचित नहीं ठहराया जा सकता।

दूसरी ओर, यह विचार भी उतना ही सशक्त है कि यदि जीवन केवल पीड़ा एवं यातना का माध्यम बन जाए, तो उस पीड़ा का अंत करना ही वास्तविक करुणा है। प्रस्तुत स्रोत में यह उल्लेख किया गया है कि कुछ रोगियों की स्थिति ऐसी होती है, जिसमें वे स्वयं जीवन-समापन की इच्छा व्यक्त करते हैं, जो यह दर्शाता है कि करुणा मृत्यु का मूलाधार मानवीय संवेदना है ।

सामाजिक दृष्टि से भी करुणा मृत्यु के संबंध में विभिन्न मत विद्यमान हैं। कुछ लोग इसे मानवीय संवेदना का उच्चतम रूप मानते हैं, जबकि अन्य इसे मानव जीवन के अवमूल्यन के रूप में देखते हैं। इस प्रकार, करुणा मृत्यु का प्रश्न बहुआयामी है, जिसमें विधिक, नैतिक एवं सामाजिक सभी पक्षों का समुचित संतुलन आवश्यक है।

**विधिक परिप्रेक्ष्य एवं भारतीय न्याय संहिता, 2023 के आलोक में विश्लेषण**

करुणा मृत्यु के विधिक परीक्षण का मूल प्रश्न यह है कि क्या किसी व्यक्ति के जीवन-समापन को, चाहे वह करुणा एवं संवेदना के आधार पर ही क्यों न किया गया हो, विधि द्वारा अनुमन्य ठहराया जा सकता है। परंपरागत रूप से आपराधिक विधि का दृष्टिकोण जीवन की रक्षा पर केंद्रित रहा है, जिसमें किसी भी प्रकार का जीवन-समापन दंडनीय कृत्य माना गया है। तथापि, आधुनिक सांविधानिक व्याख्या ने इस दृष्टिकोण में एक संतुलित परिवर्तन का प्रयास किया है।

भारतीय न्याय संहिता, 2023 के अंतर्गत जीवन के विरुद्ध अपराधों को स्पष्ट रूप से परिभाषित किया गया है, जिनमें हत्या, आत्महत्या के लिए दुष्प्रेरण एवं अन्य संबंधित अपराध सम्मिलित हैं। करुणा मृत्यु का प्रश्न विशेषतः उन प्रावधानों से संबंधित हो जाता है, जो आत्महत्या के लिए दुष्प्रेरण अथवा जीवन-समापन के कृत्य को दंडनीय ठहराते हैं। यद्यपि करुणा मृत्यु का उद्देश्य पीड़ा से मुक्ति प्रदान करना है, तथापि विधिक दृष्टि से यह प्रश्न उठता है कि क्या इसे आपराधिक उत्तरदायित्व से पूर्णतः पृथक रखा जा सकता है।

इस संदर्भ में यह महत्वपूर्ण है कि करुणा मृत्यु को सक्रिय एवं निष्क्रिय रूपों में विभाजित किया जाए। सक्रिय करुणा मृत्यु, जिसमें किसी व्यक्ति को प्रत्यक्ष रूप से जीवन-समापन हेतु औषधि अथवा अन्य माध्यम प्रदान किया जाता है, भारतीय विधि के अंतर्गत अभी भी दंडनीय कृत्य की श्रेणी में आती है। इसके विपरीत, निष्क्रिय करुणा मृत्यु, जिसमें जीवन-रक्षक उपकरणों को हटाकर प्राकृतिक मृत्यु को होने दिया जाता है, न्यायालय द्वारा सीमित परिस्थितियों में स्वीकार की गई है।

प्रस्तुत स्रोत सामग्री में यह संकेत किया गया है कि चिकित्सकों को कभी-कभी ऐसी परिस्थितियों का सामना करना पड़ता है, जहाँ रोगी की स्थिति अत्यंत गंभीर होती है और उसके स्वस्थ होने की कोई संभावना नहीं रहती, ऐसी दशा में करुणा के आधार पर निर्णय लेने की आवश्यकता उत्पन्न होती है। यह स्थिति विधिक एवं नैतिक दोनों स्तरों पर अत्यंत जटिल हो जाती है, क्योंकि चिकित्सक को एक ओर विधिक दायित्वों का पालन करना होता है, वहीं दूसरी ओर मानवीय संवेदना का भी ध्यान रखना होता है।

भारतीय न्याय संहिता, 2023 के आलोक में यह स्पष्ट है कि विधि अभी भी जीवन के संरक्षण को उच्चतम प्राथमिकता प्रदान करती है, किन्तु न्यायिक व्याख्या के माध्यम से निष्क्रिय करुणा मृत्यु को एक सीमित विधिमान्यता प्रदान की गई है। यह विधिमान्यता इस आधार पर दी गई है कि जीवन का अधिकार केवल अस्तित्व का अधिकार नहीं है, अपितु गरिमा के साथ जीवन जीने का अधिकार भी इसमें निहित है।

**सांविधानिक विमर्श एवं अनुच्छेद 21 का विस्तृत परिप्रेक्ष्य**

भारतीय संविधान का अनुच्छेद 21 प्रत्येक व्यक्ति को जीवन एवं व्यक्तिगत स्वतंत्रता का संरक्षण प्रदान करता है। प्रारंभिक व्याख्या में इस अधिकार को केवल शारीरिक अस्तित्व तक सीमित माना गया था, किन्तु समय के साथ न्यायपालिका ने इसकी व्यापक व्याख्या करते हुए इसमें गरिमा, स्वतंत्रता एवं मानवीय सम्मान को भी सम्मिलित कर लिया।

करुणा मृत्यु के संदर्भ में यह प्रश्न अत्यंत महत्वपूर्ण हो जाता है कि क्या "जीवन का अधिकार" में "मृत्यु का अधिकार" भी अंतर्निहित है। इस विषय पर न्यायपालिका ने प्रत्यक्ष रूप से मृत्यु के अधिकार को स्वीकार नहीं किया है, किन्तु "गरिमामय मृत्यु" के अधिकार को मान्यता प्रदान करते हुए यह संकेत दिया है कि जीवन की अंतिम अवस्था में व्यक्ति को अनावश्यक पीड़ा से मुक्त किया जाना चाहिए।

इस प्रकार, सांविधानिक विमर्श में करुणा मृत्यु को एक सीमित एवं नियंत्रित रूप में स्वीकार किया गया है, जिसमें व्यक्ति की स्वायत्तता, गरिमा एवं मानवीय संवेदना को संतुलित रूप से महत्व दिया गया है। यह भी स्पष्ट किया गया है कि इस अधिकार

का प्रयोग केवल उन्हीं परिस्थितियों में किया जा सकता है, जहाँ यह सुनिश्चित हो कि रोगी की स्थिति असाध्य है एवं उसके स्वस्थ होने की कोई संभावना नहीं है।

**न्यायिक दृष्टिकोण एवं प्रमुख निर्णयों का विश्लेषण**

भारतीय न्यायपालिका ने करुणा मृत्यु के प्रश्न पर समय-समय पर महत्वपूर्ण निर्णय प्रदान किए हैं, जिनमें जीवन के अधिकार एवं गरिमामय मृत्यु के अधिकार के मध्य संतुलन स्थापित करने का प्रयास किया गया है। प्रारंभिक निर्णयों में न्यायालयों ने जीवन के संरक्षण को सर्वोपरि मानते हुए करुणा मृत्यु को स्वीकार करने से परहेज किया, किन्तु समय के साथ न्यायिक दृष्टिकोण में परिवर्तन दृष्टिगत हुआ।

***अरुणा शानबाग बनाम भारत संघ (2011)*** प्रकरण में उच्चतम न्यायालय ने यह प्रतिपादित किया कि निष्क्रिय यूथेनेशिया को कुछ विशेष परिस्थितियों में विधिमान्यता प्रदान की जा सकती है। न्यायालय ने यह भी स्पष्ट किया कि ऐसे मामलों में न्यायालय की अनुमति आवश्यक होगी तथा चिकित्सकों एवं परिजनों की भूमिका भी महत्वपूर्ण होगी। इस निर्णय ने करुणा मृत्यु के विधिक विमर्श में एक महत्वपूर्ण मोड़ प्रदान किया।

इसके पश्चात् ***कॉमन कॉज़ बनाम भारत संघ (2018)*** प्रकरण में उच्चतम न्यायालय ने "जीवित वसीयत" को मान्यता प्रदान करते हुए यह घोषित किया कि प्रत्येक व्यक्ति को यह अधिकार है कि वह पूर्व में ही यह निर्देश दे सके कि जीवन की अंतिम अवस्था में उसे कृत्रिम साधनों द्वारा जीवित न रखा जाए। इस निर्णय ने करुणा मृत्यु के संदर्भ में स्वायत्तता के सिद्धांत को सुदृढ़ किया तथा यह स्थापित किया कि गरिमामय मृत्यु का अधिकार, जीवन के अधिकार का अभिन्न अंग है।

प्रस्तुत स्रोत सामग्री में भी यह संकेत किया गया है कि न्यायालयों को ऐसे मामलों में अत्यंत सावधानीपूर्वक दृष्टिकोण अपनाना चाहिए, जिससे न तो मानवीय संवेदना की उपेक्षा हो और न ही विधिक सिद्धांतों का उल्लंघन हो ।

***हरीश राणा बनाम भारत संघ (2026)*** के मामले में उच्चतम न्यायालय ने कहा कि यदि कोई रोगी स्थायी अचेतन अवस्था में है और उपचार केवल जीवन को कृत्रिम रूप से बढ़ा रहा है, तो ऐसे जीवनरक्षक उपचार को हटाना वैध है। यह "गरिमा के साथ मृत्यु के अधिकार" को अनुच्छेद 21 के अंतर्गत स्वीकार करता है तथा पूर्व निर्धारित दिशानिर्देशों को अधिक स्पष्ट बनाता है।

**चिकित्सकीय आचारशास्त्र एवं उत्तरदायित्व**

करुणा मृत्यु के संदर्भ में चिकित्सकों की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण हो जाती है, क्योंकि वही रोगी की स्थिति का मूल्यांकन कर यह निर्धारित करते हैं कि क्या रोग असाध्य है एवं क्या रोगी की पीड़ा वास्तव में असहनीय है। इस संदर्भ में चिकित्सकीय आचारशास्त्र का विशेष महत्व है, जिसमें "हितकारिता" एवं "अहानिकारिता" के सिद्धांत प्रमुख हैं।

एक ओर चिकित्सक का कर्तव्य है कि वह रोगी के जीवन की रक्षा करे, वहीं दूसरी ओर यह भी अपेक्षित है कि वह रोगी को अनावश्यक पीड़ा से मुक्त रखे। इस प्रकार, करुणा मृत्यु के संदर्भ में चिकित्सक को एक अत्यंत जटिल नैतिक द्वंद्व का सामना करना पड़ता है। प्रस्तुत स्रोत में यह भी इंगित किया गया है कि चिकित्सकों को विधिक संरक्षण प्रदान किए बिना उनसे इस प्रकार के निर्णय की अपेक्षा करना उचित नहीं होगा ।

**अंतरराष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य एवं तुलनात्मक विश्लेषण**

करुणा मृत्यु का प्रश्न केवल भारतीय विधि-व्यवस्था तक सीमित नहीं है, अपितु यह एक वैश्विक विमर्श का विषय है, जहाँ विभिन्न राष्ट्रों ने अपनी सामाजिक, सांस्कृतिक एवं विधिक परंपराओं के अनुरूप इसके संबंध में भिन्न-भिन्न दृष्टिकोण अपनाए हैं। कुछ देशों ने इसे नियंत्रित रूप में विधिमान्यता प्रदान की है, जबकि अन्य देशों ने इसे पूर्णतः निषिद्ध रखा है।

नीदरलैंड विश्व का पहला ऐसा देश है, जिसने करुणा मृत्यु को विधिक मान्यता प्रदान की। वहाँ टर्मिनेशन ऑफ़ लाइफ ऑन रिक्वेस्ट एंड असिस्टेड सुसाइड एक्ट, 2002 के अंतर्गत कठोर शर्तों के अधीन चिकित्सकों को यह अनुमति दी गई है कि वे रोगी की स्वैच्छिक एवं सुविचारित इच्छा के आधार पर जीवन-समापन की प्रक्रिया संपादित कर सकें। बेल्जियम एवं लक्ज़मबर्ग ने भी इसी प्रकार की विधिक व्यवस्था को अपनाया है।

इसके विपरीत, संयुक्त राज्य अमेरिका के कुछ राज्यों में फिजिसियन असिस्टेड सुसाइड को सीमित रूप में विधिमान्यता प्रदान की गई है, जहाँ चिकित्सक रोगी को जीवन-समापन के साधन उपलब्ध कराता है, किन्तु अंतिम क्रिया रोगी द्वारा ही संपादित की जाती है। स्विट्ज़रलैंड में भी इस प्रकार की व्यवस्था विद्यमान है, जहाँ सहायताप्राप्त आत्महत्या को कुछ शर्तों के अधीन स्वीकार किया गया है।

अंतरराष्ट्रीय अनुभव यह दर्शाता है कि जहाँ-जहाँ करुणा मृत्यु को विधिमान्यता प्रदान की गई है, वहाँ कठोर नियंत्रण, पारदर्शिता एवं उत्तरदायित्व की व्यवस्था सुनिश्चित की गई है। यह भी स्पष्ट होता है कि इस विषय में कोई एक सार्वभौमिक समाधान संभव नहीं है, अपितु प्रत्येक राष्ट्र को अपने सामाजिक एवं नैतिक मूल्यों के अनुरूप विधिक ढाँचा विकसित करना होता है।

**समालोचनात्मक विवेचन**

करुणा मृत्यु के प्रश्न का सम्यक् मूल्यांकन करने के लिए इसके पक्ष एवं विपक्ष दोनों के तर्कों का संतुलित विश्लेषण आवश्यक है। समर्थकों का मत है कि करुणा मृत्यु मानवीय संवेदना का उच्चतम रूप है, क्योंकि यह असहनीय पीड़ा से ग्रस्त व्यक्ति को मुक्ति प्रदान करती है तथा उसकी गरिमा का संरक्षण करती है। इसके अतिरिक्त, यह व्यक्ति की स्वायत्तता के सिद्धांत को भी मान्यता प्रदान करती है, जिससे वह अपने जीवन के संबंध में स्वतंत्र निर्णय ले सकता है।

इसके विपरीत, विरोधियों का तर्क है कि करुणा मृत्यु को विधिमान्यता प्रदान करने से मानव जीवन का अवमूल्यन होगा तथा यह समाज में दुरुपयोग की संभावनाओं को जन्म दे सकता है। विशेष रूप से यह आशंका व्यक्त की जाती है कि आर्थिक, सामाजिक अथवा पारिवारिक दबावों के कारण रोगियों को अनैच्छिक रूप से करुणा मृत्यु के लिए प्रेरित किया जा सकता है। प्रस्तुत स्रोत सामग्री में भी यह संकेत किया गया है कि चिकित्सकों एवं परिजनों की भूमिका कभी-कभी रोगी की वास्तविक इच्छा से प्रभावित न होकर अन्य कारकों से प्रभावित हो सकती है, जिससे दुरुपयोग की संभावना उत्पन्न होती है ।

एक अन्य महत्वपूर्ण आलोचना यह है कि चिकित्सा विज्ञान निरंतर प्रगति कर रहा है, और जो रोग वर्तमान में असाध्य प्रतीत होते हैं, वे भविष्य में उपचार योग्य हो सकते हैं। ऐसी स्थिति में करुणा मृत्यु का निर्णय अपरिवर्तनीय होने के कारण नैतिक दुविधा

उत्पन्न होती है। तथापि, इसके प्रत्युत्तर में यह तर्क दिया जाता है कि प्रत्येक निर्णय उस समय उपलब्ध तथ्यों एवं परिस्थितियों के आधार पर लिया जाता है, और असहनीय पीड़ा की स्थिति में तत्काल राहत प्रदान करना अधिक महत्वपूर्ण है।

## निष्कर्ष

उपर्युक्त समस्त विश्लेषण के आधार पर यह स्पष्ट होता है कि करुणा मृत्यु का प्रश्न केवल विधिक परिधि तक सीमित नहीं है, अपितु यह मानवीय संवेदना, नैतिकता एवं सांविधानिक मूल्यों के मध्य संतुलन स्थापित करने का एक जटिल प्रयास है। यह जीवन के संरक्षण एवं पीड़ा से मुक्ति के मध्य एक सूक्ष्म संतुलन की खोज है, जिसमें न तो जीवन के मूल्य का अवमूल्यन किया जा सकता है और न ही व्यक्ति की असहनीय पीड़ा की उपेक्षा की जा सकती है।

भारतीय परिप्रेक्ष्य में न्यायपालिका ने एक संतुलित दृष्टिकोण अपनाते हुए निष्क्रिय यूथेनेशिया को सीमित परिस्थितियों में विधिमान्यता प्रदान की है तथा गरिमामय मृत्यु के अधिकार को मान्यता दी है। तथापि, सक्रिय यूथेनेशिया के संबंध में अभी भी विधिक स्पष्टता का अभाव है, जो भविष्य में विधायिका के समक्ष एक महत्वपूर्ण चुनौती के रूप में उपस्थित होगा।

अतः यह अपेक्षित है कि विधायिका इस विषय पर एक व्यापक एवं स्पष्ट विधिक ढाँचा विकसित करे, जिसमें मानवीय संवेदना, व्यक्ति की स्वायत्तता, चिकित्सकीय उत्तरदायित्व एवं विधिक सुरक्षा—सभी का समुचित समन्वय सुनिश्चित किया जा सके। केवल इसी प्रकार करुणा मृत्यु को एक न्यायसंगत, मानवीय एवं संतुलित व्यवस्था के रूप में स्थापित किया जा सकता है।

## संदर्भ

डॉ० मुरलीधर धर चतुर्वेदी, अपराध शास्त्र एवं दंड शास्त्र, इलाहाबाद लॉ एजेंसी पब्लिकेशंस।

अरुणा रामचंद्र शानबाग बनाम भारत संघ, (2011) 4 एससीसी 454, उच्चतम न्यायालय।

कॉमन कॉज़ बनाम भारत संघ, (2018) 5 एससीसी 1, उच्चतम न्यायालय।

भारत का संविधान, अनुच्छेद 21 (जीवन एवं व्यक्तिगत स्वतंत्रता का अधिकार)।

भारतीय न्याय संहिता, 2023।

विधि आयोग, भारत, 196वीं रिपोर्ट (2006) – "अंतिम अवस्था के रोगियों के उपचार के संबंध में (रोगियों एवं चिकित्सकों का संरक्षण)"।

विधि आयोग, भारत, 241वीं रिपोर्ट (2012) – "निष्क्रिय इच्छामृत्यु: पुनर्विचार"।

रतनलाल एवं धीरजलाल, भारतीय दण्ड विधि (लॉ ऑफ क्राइम्स), लेक्सिसनेक्सिस प्रकाशन।

पी. एस. ए. पिल्लै, आपराधिक विधि (क्रिमिनल लॉ), ईस्टर्न बुक कंपनी।

ग्लैनविल विलियम्स, जीवन की पवित्रता और आपराधिक विधि (द सैंक्टिटी ऑफ लाइफ एंड द क्रिमिनल लॉ)।

जोसेफ फ्लेचर, नैतिकता और चिकित्सा (मॉरल्स एंड मेडिसिन)।

विश्व चिकित्सा संघ, इच्छामृत्यु पर घोषणा।

नीदरलैंड, जीवन-समापन एवं सहायताप्राप्त आत्महत्या अधिनियम, 2002।

ब्रिटिश मेडिकल जर्नल (बीएमजे), इच्छामृत्यु संबंधी शोध एवं विमर्श लेख।

जर्नल ऑफ क्रिमिनल लॉ एंड क्रिमिनोलॉजी, इच्छामृत्यु पर शोध लेख।

स्विस दण्ड संहिता, सहायताप्राप्त आत्महत्या संबंधी प्रावधान।

हरीश राणा बनाम भारत संघ एवं अन्य, विविध आवेदन संख्या 2238 सन् 2025, विशेष अनुमति याचिका (दीवानी) संख्या 18225 सन् 2024, भारत का उच्चतम न्यायालय, निर्णय दिनांक 11 मार्च 2026।